आकार IAS

Shaping Your Dreams

भारतीय राजनीतिक विचारक

मुख्य परीक्षा

प्रश्नपत्र-02 | भाग-01 | इकाई-04

160/4, A B Road, Pipliya Rao, Near Vishnupuri I-Bus Stop, Indore (MP)

aakarias2014@gmail.com www.aakarias.com

9713300123, 6262856797, 6262856798

प्रश्न पत्र -2

भारतीय राजनीतिक विचारक
INDIAN POLITICAL THINKERS

भाग-1

इकाई - 4

- कौटिल्य
- महात्मा गांधी
- जवाहरलाल नेहरू
- सरदार वल्लभभाई पटेल
- राममनोहर लोहिया
- डॉ. बी.आर. अम्बेडकर
- दीनदयाल उपाध्याय
- जयप्रकाश नारायण।

Part-1

UNIT - IV

- Kautilya
- Mahatma Gandhi
- Jawaharlal Nehru
- Sardar Vallabh Bhai Patel
- Ram Manohar Lohia
- Dr. B. R. Ambedkar
- Deendayal Upadhyaya
- Jayaprakash Narayan.

परीक्षा योजना

सामान्य अध्ययन के प्रथम दो पत्र के भाग-I की इकाई-IV का **पूर्णांक 30** है

इकाई	प्रश्न	संख्या	x	अंक	=	कुल अंक	आदर्श शब्द सीमा
इकाई - 4	अति लघु उत्तरीय	03	x	03	=	09	10 शब्द/01 पंक्ति
	लघु उत्तरीय	02	x	05	=	10	50 शब्द/05 से 06 पंक्तियां
	दीर्घ उत्तरीय	01	x	11	=	11	200 शब्द

नोट - प्रश्नों की संख्या आवश्यकतानुसार कम या अधिक की जा सकेगी।

विषय सूची (CONTENTS)

क्रमांक	अध्याय	पृष्ठ संख्या
01	कौटिल्य	01 – 12
02	महात्मा गांधी	13 – 29
03	जवाहरलाल नेहरू	30 – 39
04	सरदार वल्लभभाई पटेल	40 – 47
05	राममनोहर लोहिया	48 – 55
06	डॉ. भीमराव अम्बेडकर	56 – 66
07	पंडित दीनदयाल उपाध्याय	67 – 72
08	जयप्रकाश नारायण	73 – 84

कौटिल्य
Kautilya

- जीवन परिचय
- कौटिल्य का अर्थशास्त्र
- कौटिल्य का राज्य संबंधी विचार
- कौटिल्य के राजा
- कौटिल्य का विदेश नीति संबंधी विचार
- विदेश नीति
- कौटिल्य का नैतिकता संबंधी विचार
- भारतीय राजनीतिक चिंतन में कौटिल्य का योगदान एवं महत्व
- निष्कर्ष
- अभ्यास प्रश्न

जीवन परिचय
Life Introduction

कौटिल्य एक व्यावहारिक व यथार्थवादी राजनीतिक चिंतक है। प्राचीन भारत के राजनीतिक चिंतकों में उनका स्थान सबसे ऊंचा है, जहां उन्हें शासन, कला तथा कूटनीति का सबसे महान् प्रतिपादक माना जाता है। उल्लेखनीय है कि उन्हें विष्णुगुप्त, चाणक्य व वात्सायन के नाम से भी जाना जाता है।

कौटिल्य का कोई प्रमाणिक जीवन परिचय नहीं मिलता है। किवदंतियों के अनुसार कौटिल्य का जन्म 371 ई.पू. में तक्षशिला के एक गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ। बौद्ध ग्रंथों के अनुसार उनका जन्म 400 ई.पू. तक्षशिला के 'कुटिल' नामक एक ब्राह्मण वंश में हुआ था। कुटिल वंश में पैदा होने के कारण ही उन्हें कौटिल्य कहा जाता है। विशाखदत्त द्वारा रचित मुद्राराक्षस के अनुसार उनके पिता को 'चणक' कहा जाता था। पिता के नाम के आधार पर उन्हें चाणक्य कहा जाने लगा।

चाणक्य की शिक्षा-दीक्षा नालंदा विश्वविद्यालय में हुई थी। तत्पश्चात् वह इसमें अध्यापन कार्य भी करने लगे। उन्होंने एक आदर्श और सफल शिक्षक के रूप में अत्यधिक ख्याति अर्जित की। इस दौरान कौटिल्य के जीवन को परिवर्तित करने वाली दो प्रमुख घटनाएं घटित होती है जो उसे व्यावहारिक राजनीति में आने पर बाध्य करती है। प्रथम - सिकंदर का आक्रमण, द्वितीय - मगध के सम्राट महापद्मनंद द्वारा भरी सभा में कौटिल्य को अपमानित करना।

इसी दौरान नंद के अपमानों से पीड़ित चंद्रगुप्त से कौटिल्य की मुलाकात होती है और दोनों शत्रु का शत्रु अपना मित्र की नीति का अनुसरण करते हुए अपनी सेना को संगठित करते है और नंद राजा को परास्त कर देते हैं। इसके पश्चात् चंद्रगुप्त सम्राट बना और उसने कौटिल्य को अपना प्रधानमंत्री बनाया। इस पद पर रहते हुए कौटिल्य ने अपनी नीतियों का कार्यान्वयन किया और भारत को एकता के सूत्र में बांधा। हमें कौटिल्य के दर्शन संबंधी विचार उनकी पुस्तक **अर्थशास्त्र** में मिलते हैं। अर्थशास्त्र प्रमुखत: राजनीतिशास्त्र से संबंधित ग्रंथ है, जिसे **राजनीतिक यथार्थवाद की बाइबिल** भी कहा जाता है। अर्थशास्त्र की प्रथम पाण्डुलिपि सामशास्त्री ने खोजी थी। इसमें न तो लेखक का नाम और न ही पाटलिपुत्र का उल्लेख मिलता है। फिर भी अर्थशास्त्र को मौर्यकालीन रचना माना जाता है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र
Kautilya's Arthashastra

कौटिल्य का अर्थशास्त्र राजनीति एवं शासन कला की महान् कृति है, जिसकी रचना 325 ई. पू. (मौर्य काल) में की थी। विचारणीय है कि कौटिल्य ने इस ग्रंथ का नाम राजनीति शास्त्र क्यों नहीं रखा? प्राचीनकाल में राजनीतिक विषय और आर्थिक विषय एक ही माने जाते थे। कौटिल्य ने इसका स्पष्टीकरण दिया है कि मनुष्यों की जीविका को अर्थ कहते है। मनुष्य से युक्त भूमि को भी अर्थ कहते है। इस प्रकार की भूमि को प्राप्त करने और उसकी रक्षा करने वाले उपायों का निरूपण करने वाला शास्त्र अर्थशास्त्र कहलाता है।

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र के प्रारंभ में ही 04 विद्याओं का उल्लेख किया है -

1. आन्वीक्षिकी (दर्शन व तर्क)

2. त्रयी (धर्म-अधर्म या वेदों का ज्ञान)
3. वार्ता (कृषि-व्यापार)
4. दण्ड नीति (शासन कला या राजनीतिशास्त्र)

अर्थशास्त्र का प्रतिपाद्य विषय प्रमुख रूप से दंड नीति ही है। प्राचीनकाल में दंड नीति शब्द राजनीति से संबंधित विद्या के लिए प्रयुक्त हुआ है। अर्थशास्त्र की रचना गद्य-पद्य दोनों में ही की गई है, जिसके विभिन्न पहलुओं का वर्णन 15 अधिकरणों, 180 प्रकरणों, 150 अध्यायों तथा 6000 श्लोकों में किया गया है।

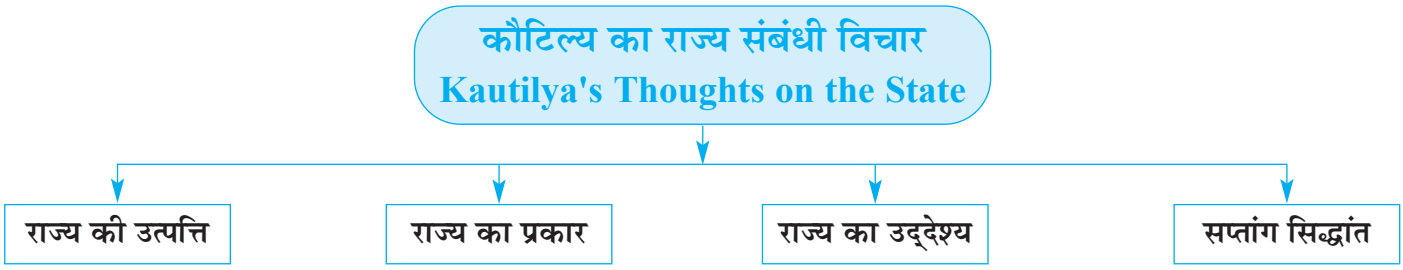

❐ राज्य की उत्पत्ति की अवधारणा

कौटिल्य ने राज्य की उत्पत्ति के संदर्भ में सामाजिक समझौता का सिद्धांत दिया है। इस सिद्धांत के अंतर्गत राज्य के निर्माण के पहले प्राकृतिक अवस्था की कल्पना की गई है। हॉब्स के समान कौटिल्य उस प्राकृतिक अवस्था को राज्यविहीन, कानूनविहीन व अनैतिकतापूर्ण मानता है। इस प्राकृतिक अवस्था में मानव अस्थिर, असुरक्षित, दु:खी और पशुवत् था। मानव को ऐसा सर्वशक्तिसंपन्न व्यक्ति चाहिए था, जो समाज से मत्स्य न्याय की व्यवस्था को समाप्त कर न्याय और सुरक्षा की स्थापना करें। अत: इसके लिए जनता ने विवस्वान के पुत्र मनु को अपना राजा स्वीकार किया।

इस तरह मनु व प्रजा के मध्य समझौता हुआ, जिसके अनुसार प्रजा राजा को अपनी उपज का छठवां भाग और व्यापार से प्राप्त धन का दसवां भाग देगी। इसके बदले में राजा प्रजा को सुरक्षा एवं समृद्धि प्रदान करेगा। इस प्रकार यह समझौता द्वि-पक्षीय था, जिससे राजा एवं प्रजा दोनों बंधे हुए थे। इस प्रकार कौटिल्य के राजनीतिक दर्शन में राज्य की उत्पत्ति में सामाजिक समझौता सिद्धांत या संविदा सिद्धांत के दर्शन होते हैं, जिसका विशद और व्यापक विवेचन आगे चलकर पाश्चात्य दार्शनिकों हॉब्स, लॉक और रूसों के द्वारा किया गया है।

❐ राज्य का प्रकार

अर्थशास्त्र के अनुसार कौटिल्य राजतंत्र का पोषक था और समस्त भारत पर एक सशक्त एवं संपन्न राजा का शासन स्थापित करना चाहता था। उसकी मान्यता है कि राजतंत्र में राज-शक्ति कुलीन वर्ग के हाथ में रहती है, जिससे प्रजा में अनुशासन एवं स्वामी भक्ति की स्थापना की जा सकती है।

❐ राज्य का उद्देश्य

कौटिल्य ने राज्य के मुख्यत: 03 उद्देश्य निर्धारित किए -

1. आंतरिक शांति एवं सुरक्षा।
2. राज्य की बाह्य शत्रुओं से रक्षा करना।
3. प्रजा के सुख-समृद्धि के लिए कल्याणकारी कार्यों की व्यवस्था करना।

❐ राज्य के तत्व/सप्तांग सिद्धांत

कौटिल्य ने राज्य के संगठन का विस्तृत विवरण सप्तांग सिद्धांत के अंतर्गत किया है। कौटिल्य के पूर्व में भी मनु, भीष्म एवं शुक्र जैसे प्राचीन मनीषियों ने भी सप्तांग सिद्धांत का वर्णन किया है। सप्तांग सिद्धांत के अनुसार राज्य रूपी शरीर के 7 अनिवार्य अंग होते हैं। इन अंगों के पारस्परिक सहयोग से ही कोई राज्य जीवित रह सकता है। जिस प्रकार शरीर में सावयवी एकता है, अर्थात् - ये परस्पर

निर्भर है। इनमें से किसी एक अंग के विकारग्रस्त होने पर अन्य शेष अंग भी प्रभावित होते हैं। ठीक इसी प्रकार राज्य के किसी अंग को हटा दे, तो राज्य भी विकलांग एवं निराधार हो जाता है।

कौटिल्य के अनुसार राज्य के 7 अंग निम्नलिखित है –

1. राजा (सिर) 2. अमात्य (आंख) 3. जनपद (जंघा) 4. दुर्ग (बांह)
5. कोष (मुख) 6. दंड (मस्तिष्क) 7. मित्र (कान)

1. **राजा (सिर)** – कौटिल्य के अनुसार राजा सातों अंगों में सर्वोपरि एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसी महत्वपूर्ण स्थिति के कारण उसे स्वामी कहा गया है। स्वामी का अर्थ होता है आदेश देने वाला। उसका प्रत्येक आदेश सर्वोच्च एवं अंतिम होता है। जिसकी अनदेखी राज्य की परिधि में कोई भी नहीं कर सकता है। राजा को प्रशासनिक क्षमता, दायित्वों के प्रति अटूट निष्ठा तथा समस्त नैतिक गुणों से युक्त होना चाहिए।

2. **अमात्य (आंख)** – अमात्य से तात्पर्य मंत्री या प्रशासनिक अधिकारियों से है। कौटिल्य के अनुसार जिस प्रकार गाड़ी एक पहिए से नहीं चल सकती, उसी प्रकार राजकार्य भी बिना अमात्यों के सहयोग के नहीं चलाया जा सकता है। कौटिल्य ने नियुक्ति से पूर्व अमात्यों की योग्यता व चरित्र परीक्षण पर अत्यधिक बल दिया है।

3. **जनपद (जंघा)** – राज्य के सप्तांग सिद्धांत का तीसरा प्रमुख अंग जनपद है। जनपद का अर्थ है जनतायुक्त भूमि। भूमि के विषय में उनके विचार है कि वह प्रत्येक प्रकार से पूर्ण होनी चाहिए और जनता निष्ठावान, स्वाभिमानी और संपन्न होनी चाहिए।

4. **दुर्ग (बांह)** – कौटिल्य ने राजा और जनपद के समान ही दुर्ग को भी महत्वपूर्ण माना है। दुर्ग राज्य का वह महत्वपूर्ण अंग है, जिसमें कोष तथा सेना को सुरक्षित रखा जाता था। दुर्ग राज्य की रक्षात्मक शक्ति और आक्रामक शक्ति दोनों का प्रकार है। राज्य को अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए दुर्ग बनाने चाहिए। कौटिल्य ने 4 प्रकार के दुर्गों का उल्लेख किया है – औदक दुर्ग (जल), पर्वत दुर्ग (पहाड़ी), धान्वन दुर्ग (मरूस्थलीय) तथा वन दुर्ग (जंगल)।

5. **कोष (मुख)** – कोष का संबंध राजा की वित्तीय व्यवस्था से है। राज्य एवं प्रशासनिक व्यवस्था संचालन के लिए धन की आवश्यकता होती है। कौटिल्य के अनुसार राजा को बाह्य आक्रमण, दैवीय आपत्तियों के समय तथा राज्य की समस्त गतिविधियों के संचालन हेतु धन की आवश्यकता पड़ती है। राजा का प्रथम कर्तव्य है कि वह कोष में वृद्धि करने की हर संभव कोशिश करें, ताकि हर स्थिति का बिना किसी संकट के सामना किया जा सके। अत: राजा को पूर्वजों द्वारा संग्रहित कोष में धर्मानुसार अर्थ संग्रह करना चाहिए।

6. **दण्ड (मस्तिष्क)** – दण्ड का अर्थ सेना से है। सेना राज्य की सुरक्षा का प्रतीक है। सेना अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में भलीभांति प्रशिक्षित, वीर, स्वाभिमानी तथा राष्ट्रप्रेमी होनी चाहिए। वह क्षत्रिय वर्ग को सेना में नियुक्ति के लिए सर्वाधिक उपर्युक्त मानता है, किंतु आवश्यकता पड़ने पर वैश्य और शूद्र को सेना में नियुक्त किया जा सकता है। यहां उल्लेखनीय है कि कौटिल्य ने आक्रमण की बजाए सुरक्षा को ही अधिक महत्व दिया है। यही कारण है कि सप्तांग सिद्धान्त में कौटिल्य ने दुर्ग को चतुर्थ, जबकि दण्ड को षष्ठम स्थान दिया है।

7. **मित्र (कान)** – राज्य का सातवां अंग मित्र है। कौटिल्य के अनुसार राज्य की प्रगति के लिए और आपत्ति के समय सहायता के लिए मित्रों की आवश्यकता होती है। मित्र वंश-परंपरागत, विश्वासी, स्थायी और हितैषी हो।

● सप्तांग सिद्धांत की आलोचना

कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित सप्तांग सिद्धांत की निम्नलिखित आधारों पर आलोचना की जाती है –

1. आधुनिक युग में राज्य के चार आवश्यक तत्व संप्रभुता, सरकार, जनसंख्या और भू-भाग है, परंतु कौटिल्य ने इनका वर्णन नहीं किया है।
2. कौटिल्य ने दुर्ग, कोष, सेना और मित्र को राज्य का आवश्यक अंग माना है। आलोचकों का कहना है कि इनके बिना भी

राज्य का अस्तित्व बना रह सकता है। सेना के अभाव में कोई राज्य समाप्त नहीं हो जाएगा।

3. कुछ विद्वानों ने राज्य की सावयव स्वरूप की आलोचना की है। उनके अनुसार राज्य को एक शरीर बताना अनुचित है।
4. कौटिल्य का सप्तांग सिद्धांत केवल राजतंत्रात्मक शासन के आवश्यक तत्वों का ही वर्णन करता है। वर्तमान लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में यह सिद्धांत अप्रासांगिक है।

उपरोक्त आलोचनाओं को गहराई से देखे तो यह तर्कसंगत प्रतीत नहीं होती है। आधुनिक राज्य के तत्व भी कौटिल्य के सप्तांग सिद्धांत में अंतर्निहित है, जैसे - स्वामी में संप्रभुता, अमात्य में सरकार, जनपद में जनसंख्या और भू-भाग सम्मिलित है। केवल शब्द अलग है, भाव एक है। राज्य का ऐसा कोई तत्व नहीं है, जिसको कौटिल्य ने सप्तांग सिद्धांत में न लिया हो।

दूसरा, नि:संदेह दुर्ग, कोष, सेना और मित्र के अभाव में राज्य का अस्तित्व हो सकता है, किंतु ऐसा शायद ही कोई राज्य हो, जिसमें यह न हो और वह स्थायी रहा हो। मित्र, सेना और कोष राज्य के आवश्यक तत्व भले ही न हो, किंतु राज्य की स्थिरता के लिए आवश्यक तत्व जरूर है। कोई भी राज्य इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता।

इस तरह कौटिल्य को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उसने अपने सप्तांग सिद्धांत द्वारा राजनीति शास्त्र और राज्य को अधिक लौकिक तथा धर्मनिरपेक्ष स्वरूप प्रदान किया। सप्तांग सिद्धांत में सातों तत्वों का सापेक्षिक महत्व है। एक तत्व के कमजोर होने पर अन्य सभी तत्व प्रभावित होते है और इनके परस्पर सहयोग से ही राज्य व्यवस्था का सफल संचालन हो सकता है।

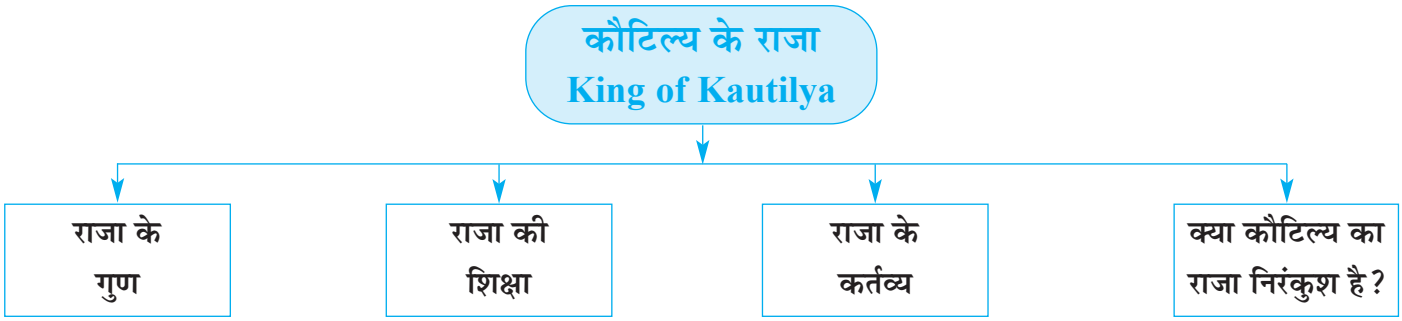

❐ राजा के गुण

कौटिल्य के सप्तांग सिद्धांत में राजा का अत्यधिक महत्व है। वह अपने राजा को केवल शासक के रूप में ही नहीं देखता है, अपितु वह उसे राजर्षि (King Philosopher) मानता है जो प्लेटो के दार्शनिक शासक से किसी भी प्रकार कम नहीं है। कौटिल्य के अनुसार राजा में निम्नलिखित गुण आवश्यक है -

- राजा को कुलीन, धर्म की मर्यादा चाहने वाला, कृतज्ञ, दृढ़ निश्चयी, विचारशील, सत्यवादी, विवेकपूर्ण, दूरदर्शी, उत्साही तथा युद्ध में चतुर होना चाहिए। उसमें स्मरण शक्ति, बुद्धि और बल की अतिशयता होनी चाहिए।
- राजा में विपत्ति के समय प्रजा का निर्वाह करने और शत्रु की दुर्बलता पहचानने की आवश्यक योग्यता भी होनी चाहिए।
- राजा को काम, क्रोध, लोभ, मोह और चपलता आदि से दूर रहना चाहिए।
- राजा में नियमानुसार राजकोष में वृद्धि करने की योग्यता होनी चाहिए।
- राजा को कभी भी वृद्ध, अपंग और दीन-हीन की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

❐ राजा की शिक्षा

जिस प्रकार प्लेटो अपनी कृति रिपब्लिक में जिस दार्शनिक राजा की अवधारणा प्रतिपादित करता है, उसमें राजा की विशेष शिक्षा पर बल देता है। ठीक उसी प्रकार कौटिल्य भी राजा की शिक्षा पर बल देता है। कौटिल्य इस तथ्य से अच्छी तरह से परिचित थे कि उपर्युक्त सभी गुणों से युक्त व्यक्ति सरलता से नहीं मिल सकता है। उसके अनुसार इनमें से कुछ गुण तो स्वभाविक होते हैं और कुछ अभ्यास से प्राप्त किए जा सकते हैं। मनुष्य के स्वभाव और चरित्र पर वंश परंपरा का प्रभाव होता है, किंतु अभ्यास से उसमें कुछ परिवर्तन संभव है। इसलिए कौटिल्य ने राजा की शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया है। उसके अनुसार 'जिस प्रकार घुन लगी हुई लकड़ी

जल्दी नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार जिस राजकुल के राजकुमार शिक्षित नहीं होते, वह राजकुल बिना किसी युद्ध आदि के नष्ट हो जाता है।' कौटिल्य ने राजा की जिन आवश्यक विद्याओं का उल्लेख किया है वह है – दंडनीति, राज्य शासन, सैन्य विद्या, मानवशास्त्र, इतिहास, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र।

❐ राजा के कर्तव्य

कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में राजा के कर्तव्यों का विशद विवेचन किया है। कौटिल्य का राजा राजतंत्र का प्रतीक है और उसी में संप्रभुता निहित है। इस तरह का राजा सर्वोच्च एवं शक्तिमान है। उनके अनुसार 'राजा और प्रजा' में पिता और पुत्र का संबंध होना चाहिए। जैसे पिता पुत्र का ध्यान रखता है वैसे ही राजा के द्वारा प्रजा का ध्यान रखा जाना चाहिए। उनके अनुसार राजा के मुख्य कर्तव्य निम्नलिखित है –

- **प्रजा का कल्याण** – कौटिल्य के अनुसार राजा का प्रथम कर्तव्य है कि वह तत्परता के साथ लोककल्याण की दिशा में सार्थक कदम उठाएं। कौटिल्य के शब्दों में प्रजा के सुख में राजा का सुख और प्रजा के हित में राजा का हित है।
- **वर्णाश्रम धर्म को बनाए रखना** – प्रत्येक वर्ण और आश्रम का धर्म है कि वह किसी भी प्रकार की हिंसा न करे, सत्य बोले, पवित्र बने, किसी से ईर्ष्या न करे, दयावान और क्षमाशील बने रहना। राजा का यह प्रमुख कर्तव्य है कि वह वर्णाश्रम धर्म को बनाए रखें और सभी प्राणियों को अपने धर्म से विचलित न होने दें।
- **शांति व्यवस्था बनाए रखना** – राजा एवं राज्य की स्थापना समाज में व्याप्त अशांति, अराजकता, अव्यवस्था से मुक्ति पाने के लिए की गई है। अत: राजा का दायित्व बनता है कि वह आंतरिक और बाहरी दोनों ही स्तरों पर शांति व्यवस्था बनाए रखें।
- **कार्यपालिक एवं प्रशासनिक कर्तव्य** – राजा प्रशासन की धुरी एवं कार्यपालिका का प्रधान होने के कारण व्यवस्था के कुशल संचालन को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न प्रकार के अधिकारियों की नियुक्ति करता है। वह सभी कर्मचारियों के कार्यों का नियंत्रण, नियमन एवं निरीक्षण करता है।
- **विधायी कर्तव्य** – राजा राज्य की विधि निर्माण का मूल स्त्रोत होता है। उसके द्वारा बनाया गया कानून अंतिम एवं सर्वोच्च होता है, जिन्हें किसी भी प्रकार की चुनौती नहीं दी जा सकती है। राजा विधि का निर्माण धर्म, व्यवहार, चरित्र, शासन के आधार पर करता है, जिसका मुख्य ध्येय जनता के सुखों में वृद्धि करना होता है।
- **न्यायिक कार्य** – राजा न्याय की मूर्ति होता है। राजा विभिन्न न्यायालयों की स्थापना करता है। अपील की दृष्टि से राजा ही सर्वोच्च न्यायालय है। किसी भी मामले के निर्णय में अपनी मनमानी नहीं कर सकता है। राज्य में प्रचलित विधियों के अनुसार ही वह निर्णय देता है। उसका निर्णय धर्म, लोकाचार, व्यवहार और न्याय पर आधारित होता है।
- **दंड की व्यवस्था करना** – राजा न्यायपालिका के द्वारा दोषी व्यक्तियों को दंड देने की व्यवस्था करता है। समाज और सामाजिक व्यवस्था दंड पर ही निर्भर करती है। दंड का उचित प्रयोग न होने की स्थिति में अराजकता को बढ़ावा मिलता है। अत: राज्य में दंड की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। यदि दंड का उचित प्रयोग नहीं होता, तो बलवान निर्बलों को वैसे ही खा जाते हैं, जैसे बड़ी मछली छोटी को।
- **आर्थिक कर्तव्य** – राजा का यह कर्तव्य है कि राज्य की अर्थव्यवस्था की समृद्धि के लिए हर संभव प्रयास करे, इसके लिए व्यापार एवं वाणिज्य का विस्तार करे, खेती और उद्योग-धंधे को प्रोत्साहन दे, पशु नस्ल सुधार आदि का प्रबंध करे। आर्थिक समृद्धि के बल पर ही राज्य प्रत्येक क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियां अर्जित कर सकता है।
- **आय-व्यय संबंधी कार्य** – राजा को आय-व्यय का पूरा लेखा और प्रबंध रखना चाहिए। आय-व्यय का उचित प्रबंध न होने की स्थिति राज्य को आर्थिक दुरावस्था की ओर ले जाती है, जिसका परिणाम संपूर्ण व्यवस्था को झेलना पड़ता है। राज्य का बजट संतुलित होना चाहिए, अत्यधिक घाटे का बजट राज्य का विनाश करता है और प्रजा को गरीब बना देता है।
- **युद्ध करना** – कौटिल्य के अनुसार युद्ध करना राजा का प्रमुख कार्य है। उसके अर्थशास्त्र का केंद्र एक ऐसा विजिगीषु राजा

है, जिसका उद्देश्य निरंतर नई भूमि प्राप्त कर अपने क्षेत्राधिकार वृद्धि करना है। वह राज्य के सभी आर्थिक और अन्य संस्थाओं की महत्ता इसी मापदंड से निश्चित करता है कि वे राज्य को किस सीमा तक सफल युद्ध के लिए तैयार करते हैं। इस प्रकार कौटिल्य राजा को व्यापक शक्तियां और कार्य देता है, जो उसकी सर्वोच्चता को सिद्ध करती है।

❐ क्या कौटिल्य का राजा निरंकुश है?

कौटिल्य राजतंत्र को शासन की श्रेष्ठ प्रणाली मानता है और अपने सप्तांग सिद्धांत में राजा को सर्वोच्च स्थिति प्रदान करता है। कौटिल्य के राजा को प्राप्त शक्तियों और कार्यों के आधार पर कुछ राजनीतिक चिंतकों का मानना है कि कौटिल्य के राजा में निरंकुशता के बीज दिखाई देते हैं। उनका मानना है कि जिस रूप में राजा को स्थान दिया गया है, वह आगे चलकर निरंकुशता में परिणित होता है।

यद्यपि यह धारणा सही प्रतीत नहीं होती है। प्राचीन भारत में राजतंत्र ही सर्वप्रमुख एवं एकमात्र शासन प्रणाली थी, लेकिन कोई भी राजनीतिक विचारक निरंकुश शासन का समर्थक नहीं था। सभी ने राजा की निरंकुशता को रोकने के लिए कुछ निश्चित उपाय किए हैं। कौटिल्य ने भी अपने अर्थशास्त्र में ऐसे प्रतिबंधों का उल्लेख किया है जो राजा की निरंकुशता पर अंकुश लगाने में सहायक है जो कि निम्नलिखित है –

- **अनुबंधवाद** – राजा की शक्ति पर प्रथम प्रतिबंध अनुबंधवाद का है। कौटिल्य के अनुसार राजा और प्रजा के मध्य अनुबंध है कि प्रजा राजा की आज्ञाओं का पालन करेगी और राजा प्रजा की रक्षा करेगा। इसका स्वभाविक निष्कर्ष यह है कि राजा के द्वारा प्रजा के जन-धन को हानि पहुंचाने वाला कोई कार्य नहीं किया जा सकता।
- **राजा का व्यक्तित्व तथा शिक्षा व प्रशिक्षण** – कौटिल्य ने राजा की निरंकुशता पर एक प्रभावशाली प्रतिबंध राजा के व्यक्तित्व और उसे प्रदान की गई शिक्षा के आधार पर लगाया है। कौटिल्य ने राजा के लिए अनेक मानसिक और नैतिक गुण आवश्यक बताए है और इस प्रकार का सर्वगुण संपन्न राजा अपने स्वभाव से ही निरंकुश नहीं हो सकता। इसके अलावा उन्होंने राजा की शिक्षा पर भी बल देकर उसमें ऐसे संस्कार डालने चाहे है कि वह निरंकुशता का मार्ग न अपनाकर लोकहित के कार्यों में ही लगा रहे।
- **मंत्रिपरिषद का नियंत्रण** – कौटिल्य के अनुसार राजा रूपी रथ के दो चक्र राजा और मंत्रिपरिषद है। शासन की शक्ति अकेले राजा में निहित नहीं है, वरन् उसे अपनी शक्ति का प्रयोग मंत्रियों के परामर्श के आधार पर ही करना है। इस प्रकार मंत्रिपरिषद राजा की शक्ति पर नियंत्रण रख, उसे निरंकुश बनने से रोकती है।
- **धार्मिक नियम एवं रीति-रिवाज** – राजा की शक्ति पर एक बड़ा प्रतिबंध धार्मिक नियम, नीति व रीति-रिवाजों का है। राजा के अधिकार धर्म, नैतिक नियमों और देशकाल से जुड़े रीति-रिवाजों से सीमित है और वह इनका पालन करने के लिए बाध्य है। तात्कालीन जीवन में धर्म और परलोक की भावना बहुत प्रबल होने के कारण नरक का भय भी राजा को मनमानी करने से रोकता था।
- **स्थानीय संस्थाएं** – भारत में प्राचीनकाल से ही स्थानीय संस्थाओं का अस्तित्व रहा है। इन संस्थाओं को पर्याप्त मात्रा में शक्ति प्राप्त थी। इनके द्वारा जो कार्य संचालित किए जाते थे, उनका सीधा संबंध स्थानीय लोगों के साथ जुड़ा हुआ होता था। अत: यह संस्थाएं भी राजा की निरंकुशता पर अंकुश लगाने में सहायक थी।
- **राजा की कठोर दिनचर्या** – कौटिल्य ने अपने राजा के लिए एक ऐसी व्यस्त और कठोर दिनचर्या का उल्लेख किया है जो निरंकुश होने का समय प्रदान नहीं करती।
- **न्यायिक दंड** – कौटिल्य के अनुसार राजा को न्याय संबंधी सर्वोच्च अधिकार प्राप्त है, लेकिन राजा विधि के अनुसार ही दंड दे सकता है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र के चौथे अधिकरण के 13वें अध्याय में स्पष्ट किया है कि 'जो राजा अदंडनीय व्यक्ति को दंड दे, प्रजा को चाहिए कि उस दंड का 30 गुणा दंड राजा से वसूल करें।' ऐसा करने से राजा के पापों की शुद्धि होती है। इस प्रकार राजा अपनी न्यायिक शक्ति का उपयोग भी स्वेच्छाचारी रूप से नहीं कर सकता है।
- **प्रजा के वित्तीय अधिकार** – कौटिल्य के अनुसार राजा को प्रजा पर, उसकी पूर्व अनुमति के बिना कर लगाने, तत्संबंधी धन संचय करने तथा उसका व्यय करने का अधिकार नहीं है। वह धन का उपयोग निजी स्वार्थ की पूर्ति के लिए खर्च नहीं

कर सकता है। वह केवल धर्मपूर्ण नीति से राजकोष में वृद्धि कर सकता है, अधर्म पूर्ण नीति से नहीं। इस प्रकार कौटिल्य वित्तीय संसाधनों पर प्रजा के उचित नियंत्रण को स्थापित कर राजा पर वित्तीय प्रतिबंध स्थापित करता है, ताकि वह निरंकुश न बन सके।

इस प्रकार कौटिल्य अपने राजनीतिक चिंतन में राजा को सर्वोच्च शक्ति प्रदान करते है, फिर भी राजा पूर्ण रूप से निरंकुश नहीं बन सकता है। प्रो. अल्तेकर का मत है कि 'कौटिल्य का राजा बहुत से लौकिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक बंधनों से मर्यादित है।' राजा सदैव प्रजाहित में कार्य करेगा, प्रजा के सुख में ही राजा का सुख निहित है। इस प्रकार कल्याणकारी राजा कभी भी स्वेच्छाचारी, अत्याचारी और निरंकुश नहीं बन सकता है।

कौटिल्य का विदेश नीति संबंधी विचार
Kautilya's Foreign Policy Thoughts

राज्य के प्रशासन में सुरक्षा और विदेश संबंधों के संचालन का विशेष महत्व है। राज्य को किसके साथ मित्रता और शत्रुता रखनी चाहिए- यह एक बहुत बड़ी समस्या है। कौटिल्य ने इस समस्या के समाधान के लिए अर्थशास्त्र में विदेश नीति में विशद् विवेचन किया है। कौटिल्य की विदेशी नीति संबंधी विचारों को निम्नलिखित बिंदुओं में समझ सकते हैं -

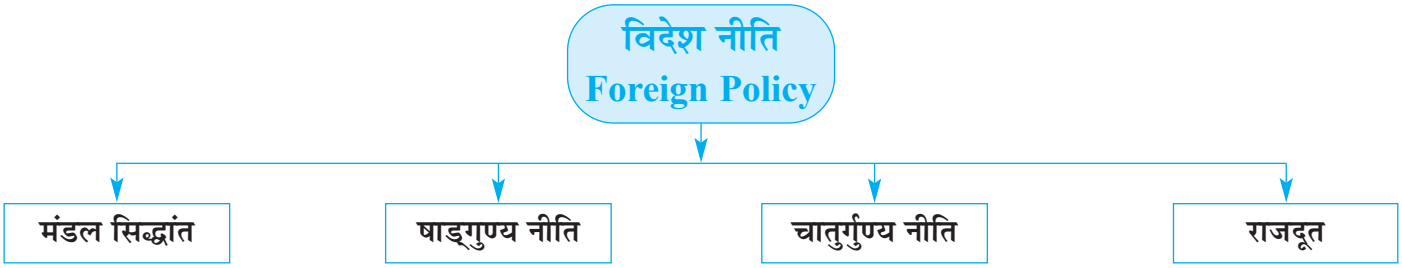

❐ मंडल सिद्धांत

कौटिल्य ने अपने मंडल सिद्धान्त में अनेक राज्यों के समूह या मंडल में विद्यमान राज्यों द्वारा एक-दूसरे के प्रति व्यवहार में लाई जाने वाली नीति का वर्णन किया है। इस सिद्धान्त में मंडल केंद्र ऐसा राजा होता है जो पड़ोसी राज्यों को जीतकर अपने में मिलाने के लिए प्रयत्नशील है। कौटिल्य ने ऐसे राजा को विजिगीषु (विजय की इच्छा रखने वाला राजा) कहा है। कौटिल्य की मान्यता है कि एक राजा का पड़ोसी राज्य स्वाभाविक रूप से उसका शत्रु राज्य होता है। विजिगीषु की सीमा से लगा हुआ राज्य शत्रु प्रकृति का होता है, जबकि शत्रु की सीमा से लगा राज्य परन्तु विजिगीषु की सीमा से नहीं, शत्रु का शत्रु व विजिगीषु का मित्र होता है।

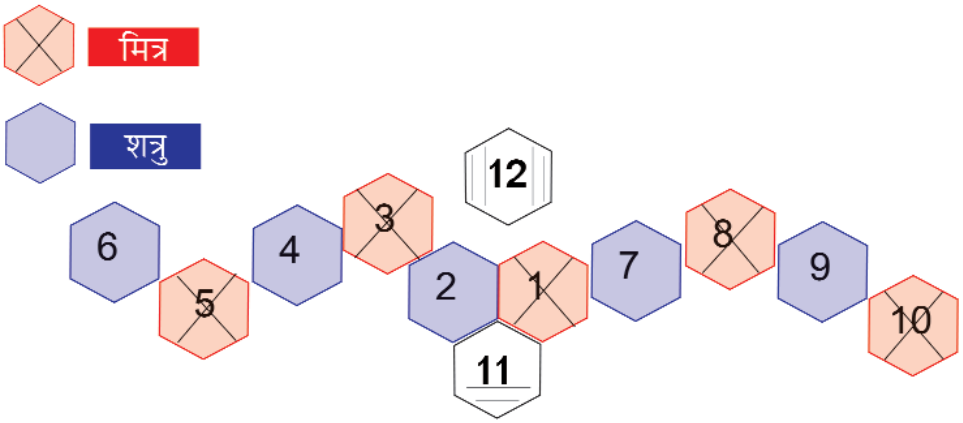

1. विजिगीषु	4. अरि-मित्र	7. पार्ष्णिग्राह	10. आक्रान्दासार
2. अरि	5. मित्रा-मित्र	8. आक्रान्दा	11. मध्यम राज्य
3. मित्र	6. अरिमित्रा-मित्र	9. पार्ष्णिग्राहासार	12. उदासीन राज्य